IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बुंदेली लोकगीतों में लोक जीवन के स्वर

शोधार्थी दीपिका शर्मा
जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर

बुंदेलखंड की संस्कृति में लोक जीवन अत्यंत आनंद एवं हर्षोल्लास से परिपूर्ण तथा गीत संगीत के माधुर्य से सराबोर है। बुंदेली समाज में जनजीवन अत्यंत सरल, निश्छल और सहजता से संचालित है। ग्रामीण जन, श्रमिक और किसान, पुरुष और महिलाए सभी जन लोकवाद्यों पर बजती मधुर संगीत के धुनों पर ऋतुओं के स्वागत में धिरक उठते हैं। लोकगीतों की स्वर लहरी में डूबकर उनके आनंद और हर्ष की अभिव्यक्ति देखते ही बनती है। कहते हैं भारत की आत्मा गांवों में बसती है। ग्राम्य जीवन का लोक काव्य भारतीय संस्कृति की बुनियाद है। प्रकृति ही इस संस्कृति की प्रेरणा है। वर्षभर यहां प्रकृति और पर्यावरण की रक्षा के व्रत, पर्व, और नृत्य, संगीत एवं गीतों का आयोजन, यहां की सांस्कृतिक परंपरा है। यहां सभी ऋतुओं के लोकगीत और लोक पर्व है। ऋतु गीतों की परंपरा वेदों से संस्कृत में आई और फिर यहीं से लौकिक संस्कृत के माध्यम से लोकभाषा बुंदेली मे ऋतु गीतों की परंपरा का आविर्भाव हुआ। भारतीय वाड्मय में छः ऋतुएँ प्रमुख हैं।

ग्रीष्म, वर्षा, शरद, शिशिर, हेमंत और फिर ऋतुराज बसंत। सभी ऋतुओं का लोक जीवन में वैज्ञानिक महत्व है। लेकिन बसंत का आगमन लोक जीवन में एक नया उल्लास लेकर आता है। ऋतुराज बसंत अनंत उत्साह का प्रतीक है और इसकी अनुपम छटा अवर्णनीय है। कवि पद्माकर ने बसंत ऋतु के सौंदर्य का वर्णन करते हुए लिखा ह–

''कूलनि में कौलिन, कछारन में, कुंजन में,

क्यारिन में कलिन कलीन किलकत है।

द्वार में, दिशान में, दुनी देश–देशन में,

देखो दीप दीपन में दीपत दिगंत है।

वीथिनि में, ब्रज में, नबेलिन में, बेलिन में,

बननि में, बागन में, बगरो बसंत है।''[1]

यहां लोक पर्वो के अवसर पर प्रकृति का सानिध्य सदा रहता है। ऋतुओं का लोकपर्वों से गहरा संबंध है। जत दशहरा कृषि कार्य के प्रारंभ का पूजन है। आषाड़ो देवताओं का पूजन वर्षा ऋतु को आराधना और अभिनंदन है।

अखती (अक्षय तृतीया) के दिन घड़ा, सत्तू और पंखे का दान वैशाख की ऋतु से जोड़कर देखा जाता है। बसंत ऋतु में बसंत पंचमी के दिन प्रकृति और वृक्षों की पूजा के अलावा मां सरस्वती की जयंती का पूजन–अर्चन, महोत्सव एवं लोकगीतों का समावेश गायन किया जाता है। यह उल्लास का महापर्व है। अनंत उत्साह खुशियां और उमंग को अनुभूतियों का यह पर्व बसंत ऋतु के गीतों में मुखर हो उठता है। यह प्रकृति के श्रृंगार का और युवा हृदय में प्रेम के इजहार का मौसम है। होली तक वसंतोत्सव मनाया जाता है। लोक कवि इसुरी कहने लगते हैं–

''अखियाँ जब काहू से लगतीं,

सब–सब रातन जगतीं।''[2]

बुंदेली लोक संस्कृति में ऋतु गीतों में व्यक्त लोक जीवन के स्वर श्रंगार और माधुर्य से इतने आकर्षक बन पड़े हैं कि इनमें मनुष्य के प्रेम की अभिव्यक्ति सभी का मन मोह लेती है। नारी अपने पिया के साथ इतनी तन्मय है कि उस भुनसारे चिरैया का बोलना भी प्रेम में व्यवधान उत्पन्न करता प्रतीत होता है। वह कुएं पर, बाग–बगीचे में, चौपर में हर स्थान पर अपने प्रिय के संग रहना चाहती है। वह इसके लिए ढिमरिया और मलिनिया बनने तक को तैयार है।

''नजरिया मोई सो लगइयो मोरे राजा।

कै मोरे राजा अंगना में कँअला खदैया।

ढिमरिया मोई को बनइयो मोरे राजा।

कै मोर राजा अंगना में बगिया लगइयो

मलिनियाँ मोई को बनइयो मोर राजा।

कै मोर राजा अँगना में चौपट डरइयो।

बाजू मोई को जिताइयो मोरे राजा।

नजरिया मोई सो .....'[3]

बुंदेली लोकगीत लोकसंस्कृति का दर्पण है। बुंदेलखण्ड आस्था और भक्ति का प्रदेश है। यहा जनमानस की खुशी, प्रेम, सुख–दुख, कसक, पीड़ा, उमंग, हर्ष, आस्था और भक्ति की भावना सबकुछ लोकगीतों के माध्यम से ही व्यक्त होता है। शिवरात्रि में भगवान भोलेनाथ शंकर की बबुलिया और काँवर यात्राएं आस्था का प्रतीक है–

''असनई के घाव बुरे, बुरौ बरई को हार।

चंबल के भरका बुरे, बिरले सूर खटाँय।।

कं भोला तेरी बंब। कं भोला तेरी बम भोले।।'[4]

शिवरात्रि के बाद रंगों की फागुनी दस्तक होती है। होली का त्यौहार आ जाता है। फागुनी हवा की सरसराहट से धरती का रंग अबीर हो जाता है। प्रकृति के आंगन में गुलाल बरसता है। फागुन में फागं गाई जाती हैं। कवि ईसुरी की फागें बुंदेली संस्कृति की प्राण है। ईसुरी फाग साहित्य के आचार्य हैं। गंगाधर विकास और ख्याली राम भी फाग साहित्य के यशस्वी हस्ताक्षर हैं। आचार्य भगवत दुबे ने भी श्रेष्ठ फागं रची है। आम लोक जीवन में प्रचलित एक फाग लोकगीत है का अनूठा अंदाज देखिए–

''दिल डारें अटा पे काये ठाड़ी।

काये ठाड़ी कैसे ठाड़ी, दिल डारें अटा पे काये ठाड़ी।

कं तोरी सास ननंद दुःख दीनी, कं तोरे सैयां ने दर्द गारी

ना मोरी सास ननंद दुःख दीनी, न मोरे सैयां ने दर्द गारी

मायके के यार सपने में देखे, सो आई हिलोर फटं छाती।

दिल डारें अटा पे काये ठाड़ी।'[5]

बुंदेलखंड में कृष्ण और राधा की होरो के रसिया बहुत लोकप्रिय हैं–

''राधा खेले होरी मनमोहन के साथ मोरे रसिया।

कै मन के सर गारी हो, कै मन उड़त गुलाल मोरे रसिया।

नौ मन केसर गारी हो, दस मन उड़त गुलाल मेरे रसिया।

कौना की चूनर भींजी हो, कौना की पंचरंग पाग मोरे रसिया।

राधा की चूनर भींजी हो, कान्हा की पंचरंग पाग मोरे रसिया।।''[6]

चैत्र फसल काटने का समय होता है। इस समय श्रम का परिहार करने वाले चेतुआ गीत गाए जाते हैं। चैत्र की नवरात्रि में जवारे बोये जाते हैं। माता की अचरिया, भजन और भटे गाई जाती हैं। इसी क्रम में भक्त जनों द्वारा लागुरिया गीत गाये जाते हैं। किसान के घर फसल काटकर आ जाती है। घर–परिवार में खुशी छा जाती है। अभावों, संघर्षों और दुखों से जूझते हुए भी कृषक अपना धैर्य नहीं खोते। वे अपने लोक देवता कारस देव, घटारिया, कालका और हरदौल जू पर अपनी आस्था बनाये रखते हैं।

बुंदेलखंड में ऋतु गीतों का बहुत महत्व है। घर–घर में आयोजित पर्व उत्सव और मांगलिक आयोजन इन्हीं लोकगीतों के सहारे होते रहते हैं। हर ऋतु एक आनंद का उत्सव है। सावन का महीना बहनों का महीना है। भाई की प्रतीक्षा का महीना है। आकाश में उमड़ते–घुमड़ते बादल, बरसात की बूंदे जीवन में रस घोल देती हैं। सैरे गीत और नृत्य पावस ऋतु का आनंद बढ़ाते हैं। बहने भुजरियों के गीत गाती हैं। बरसात में चौपालों में आल्हा गाया जाता है। इसी ऋतु में ढीमर, काछी और गडरिय रावला, (ढिमरायाई) गाकर मदमस्त होते हैं।

''ढीमर कक्का ने डारौ जाल, बींध गई जल मछरी

मौड़ी–मौड़न को खल गओ भाग, तनक डरे तेल और प्याज।

छोंक दें जल मछरी।''[7]

सावन ऋतु में सैरे और राछारे झूला झूलते हुए महिलाएँ गाती हैं। राछरे बुंदेलखंड में गाये जाने वाले रासो या वीर काव्य काथात्मक लोकगीत है। मुगलों से अपने सतीत्व की रक्षा के लिये चंद्रावली के जौहर करने की साहसिक कथा इन लोकगीतों में गाई जाती है।

भादा के महीने में पानी की झड़ी लग जाती है। कवि जायसी की विरहणो नायिका महाकाव्य पद्मावत में नागमती सामान्य नारी की भांति चिंताग्रस्त है। जायसी का बारहमासा बारहों महीनां की विरहगाथा है।

क्वार का महीना शरद ऋतु का महीना है। शरद कवाँरी कन्याएँ पूरे महीने मामलिया, गारे, सअटा और झिंझिया का खेल खेलती हैं। शरद पूर्णिमा के दिन टेसू और झिंझिया का विवाह होने पर इस खेल का समापन होता है। शारदीय नवरात्र में मां दुर्गा की आराधना के गीत गाये जाते हैं। असत्य पर सत्य की विजय का पर्व दशहरा मनाया जाता है। प्रकाश पर्व दीपावली की रोशनी में घर–घर दीपकों का सौंदर्य मन को मोह लेता है। कार्तिक स्नान पर्व है। प्रभात बेला में समूहों में चलकर महिलाएँ नदो या तलाब पर स्नान करने लोकगीत गाते हुए जाती हैं–

''दहिया लेके आ जाऊंगी बड़े मोर।

आ जाऊंगी बड़े भोर, दहिया लेकर आ जाऊंगी

ना मानो चुनरी घर राखो सिगर विरज की मील

दहिया लेकर आ जाऊंगी बड़े भोर।।'[8]

अगहन और पूस का महीना सर्दी की ठिठुरन बढ़ा देता है। बुंदेलखंड में जाड़ की ऋतु अपना असर छोड़ती है। चिल्ला जाड़ा हाड़ कंपा देता है। जाड़े की ठंड को लेकर बुंदेलखंड में कहावत प्रसिद्ध है–

''जाड़ों ठाड़ों खेत में, करें हेत की बात।

बैरी मोरे तीन है, रूई, कंबल उर प्यार।''

विभिन्न प्रकार के लोकगीत जाड़े की ऋतु में सुनने को मिलते हैं–

''आ गई रे जाड़े की बहार।

परोसिन गुईयां रूइया तो भर चले नई खोरों में।।'[9]

कृष्ण कन्हैया को आधार बनाकर भी ऋतुओं के चित्रण में मानव जीवन की भावना को स्वर मिले हैं–

''कन्हैया बिना कौन हरै मोरी पीरा।

पूस मास में ठंड जो व्यापे।

माघ में हलत सरीरा।''[10]

नायिका का पति जो परदेश से लौटकर नहीं आया तो वह कह उठती है–

''उन बिन जाड़ों सहो न जावै,

ना बलम घर आये।।''[11]

माघ में महीने में मकर संक्रांति से मौसम बदलने लगता है। माघ बसंत को अगवानी करता है। इस प्रकार बुंदेली लोक भाषा के माध्यम से लोकगीतों में विभिन्न ऋतुओं का सजीव चित्रण बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत हुआ है। वसंत ऋतु में बाग बगीचों में गेंदा फूलने लगता है। कोयल क मीठे बोल सुनाई पढ़ाने लगते हैं। भोर की समीर में नई ताजगी और वातावरण में नई रंगत घुलने लगती है। अलगोजा, कींगड़ी, ढोलक, मृदंग तथा लोटा की संगति, लय, सुर और आल्हाद का समन्वय कर पूरी बुंदेली माटी को आनंद की अनुभूति से भर देती है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि बुंदेलखंड सही अर्थों में भारत का हृदय प्रदेश है। यहा की कला, साहित्य और संस्कृति में प्रकृति निर्मित है। यहा समस्त ऋतुओं के लोकगीत अपनी छटा बिखेरते रहते हैं। यहा की परंपराए और लोकसंस्कृति हमारी विरासत है। लोक की संवेदना और रसमयता में डूबकर ही इस धरती ने यहा के जनजीवन को संस्कारित किया है। आज के संक्रमण काल में भी हमारे लोक साहित्य के ऋतु गीत हमारे समाज और जीवन में नई इस स्फ़र्ति, नई चेतना और आनंदानभूति का संचार कर हमें हमारी जड़ों से जोड़ते हैं। हमारी पहचान बनते हैं। बुंदेली ऋतु गीत हमें पर्यावरण बचाने का संदेश देते हैं। यही नहीं बुंदेली ऋतु गीतों में लोक जीवन के स्वर हमारे शुष्क जीवन में रस का संचार करते हैं और हमारे जीवन को लोक लय में संतुलित रखकर हमारी सांस्कृतिक अस्मिता और परंपराओं की अनमोल धरोहर को भी संरक्षण प्रदान करते हैं।

संदर्भ संकेत

1 मधु संचय (पाठ्यपुस्तक) पद्माकर का ऋतु वर्णन (पृष्ठ क्रमांक 49), 1966

2 ईसुरी (डॉ. शंकर लाल शुक्ल) बुंदेलखंड प्रकाशन ग्वालियर (2005) पृष्ठ क्रमांक 19

3 हमारा बुंदेलखंड, संपादक सरोज गुप्ता, छाया चौकसे, 2015, अनुइम बुक्स दिल्ली, पृष्ठ क्रमांक 272

4 हमारा बुंदेलखंड, संपादक सरोज गुप्ता, छाया चौकसे, 2015, अनुइम बुक्स दिल्ली, पृष्ठ क्रमांक 272

5 उरैन, डॉ. कामिनी, आराधना ब्रदर्स–कानपुर, 2014, पृष्ठ क्रमांक 19

6 हमारा बुंदेलखंड, संपादक सरोज गुप्ता, छाया चौकसे, 2015, अनुइम बुक्स दिल्ली, पृष्ठ क्रमांक 273

7 उरैन, डॉ. कामिनी, आराधना ब्रदर्स–कानपुर, 2014, पृष्ठ क्रमांक 21

8 उरैन, डॉ. कामिनी, आराधना ब्रदर्स–कानपुर, 2014, पृष्ठ क्रमांक 14

9 लोकमंगल, लोकसाहित्य विशेषांक, 2025, संपादक डॉ. भगवान स्वरूप चैतन्य, पृश्ठ क्रमांक 48

10 बुंदेली चौकड़िया, आचार्य भगवत दुबे, लोकमंजरी, पाथेय प्रकाशन–जबलपुर, 2022, पृश्ठ क्रमांक 23

11 उरैन, डॉ. कामिनी, आराधना ब्रदर्स–कानपुर, 2014, पृष्ठ क्रमांक 24